"बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ"

JAYOTI VIDYAPEETH WOMEN'S UNIVERSITY, JAIPUR

Faculty of Education & Methodology

Faculty Name	-	JV'n GIRIJA SHARMA (Assistant Professor)
Program	-	M.A III Sem
Course Name	-	निबंधकार-आचार्य रामचन्द्र शुक्ल
Session No. & Name	-	1.1 (निबंधकार-आचार्य रामचंद्र शुक्य का जीवन परिचय)

PLANNING AND STARTED

(Basic Knowledge For Student)

शैली- शुक्ल जी की लेखन शैली के अनेक रूप है जो संक्षेप में इस प्रकार है –

1. **समीक्षात्मक शैली-** इसका प्रयोग प्रधान रूप से समालोचनात्मक निबंधों तथा ग्रंथों में हुआ है।

2. **गवेषणात्मक शैली-** शोध प्रधान विषयों पर लिखते समय इसका रुप सामने आया है।

3. **विचारात्मक शैली-** साहित्यिक विषयों पर लिखते समय इस शैली का उपयोग हुआ है ।

4. **वर्णनात्मक शैली**- वर्णन और विवरण के प्रसंग में शैली भी अपनाई गई है ।

5. **सूक्ति परक शैली**- शुक्ल जी की यह विशिष्ट शैली है। आप सूक्ति परक वाक्य का प्रयोग करके विषय को

रोचकता तथा गंभीरता प्रदान करते हैं । यथा विश्वासपात्र मित्र जीवन की एक औषध है।

6. **हास्य व्यंगात्मक शैली**- गंभीरता को कम करने के लिए शुक्ला जी ने बीच-बीच में हास्य व्यंग शैली का प्रयोग किया है।

कार्यक्षेत्र:- मिर्ज़ापुर के तत्कालीन कलक्टर ने रामचन्द्र शुक्ल को एक कार्यालय में नौकरी भी दे दी थी, पर हैड क्लर्क से उनके स्वाभिमानी स्वभाव की पटी नहीं। उसे उन्होंने छोड़ दिया। फिर कुछ दिनों तक रामचन्द्र शुक्ल मिर्ज़ापुर के मिशन स्कूल में चित्रकला के अध्यापक रहे। सन् 1909 से 1910 ई. के लगभग वे 'हिन्दी शब्द सागर' के सम्पादन में वैतनिक सहायक के रूप में काशी आ गये, यहीं पर काशी नागरी प्रचारिणी सभा के विभिन्न कार्यों को करते हुए उनकी प्रतिभा चमकी। 'नागरी प्रचारिणी पत्रिका' का सम्पादन भी उन्होंने कुछ दिनों तक किया था। कोश का कार्य समाप्त हो जाने के बाद शुक्ल जी की नियुक्ति काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में हिन्दी के अध्यापक के रूप में हो गई। वहाँ से एक महीने के लिए वे अलवर राज्य में भी नौकरी के लिये गए, पर रुचि का काम न होने से पुन: विश्वविद्यालय लौट आए। सन् 1937 ई. में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के हिन्दी विभागाध्यक्ष नियुक्त हुए एवं इस पद पर रहते हुए ही सन् 1941 ई. में उनकी श्वास के दौरे में हृदय गति बन्द हो जाने से मृत्यु हो गई।

महत्वपूर्ण विशेषता:-उनकी एक अन्य महत्वपूर्ण विशेषता समसामयिक काव्य चिन्तन सम्बन्धी जागरूकता है। उन्होंने जिन साहित्य-मीमांसकों एवं रचनाकारों को उद्धृत किया है, उनमें से अधिकांश को आज भी हिन्दी के तमाम आचार्य और स्वनाम धन्य आलोचक नहीं पढ़ते। सम्भवत: रामचन्द्र शुक्ल उन प्रारम्भिक व्यक्तियों में होंगे, जिन्होंने इलियट और कमिंग्ज जैसे रचनाकारों का भारतवर्ष में पहली बार उल्लेख किया है। 1935 ई. में इन्दौर के हिन्दी साहित्य सम्मेलन की साहित्य परिषद् के अध्यक्ष पद से दिया गया भाषण 'काव्य में अभिव्यंजनवाद'[2] में इस जागरूकता के सम्बन्ध में सबसे अधिक दर्शन होते हैं। उन्होंने जे.एस. फ़्लिण्ट की चर्चा की है तथा हेराल्ड मुनरो की तारीफ़ की है तथा कैलीफ़ोर्निया युनीवर्सिटी के अध्यापकों द्वारा लिखित सद्य: प्रकाशित आलोचनात्मक निबन्धों के संग्रह के उद्धरण दिये हैं।इस प्रसंग में यह उल्लेखनीय है कि पहली बार हिन्दी में शुक्ल जी ने सामाजिक मनोवैज्ञानिक आधार पर किसी कवि की विवेचना करके आलोचना को एक व्यक्तित्व प्रदान किया, उसे जड़ से गतिशील किया। एक ओर उन्होंने सामाजिक सन्दर्भ को महत्व प्रदान किया एवं दूसरी ओर रचनाकार की व्यक्तिगत मन:स्थिति का हवाला दिया। शुक्ल जी के व्यक्तित्व का एक गुण यह भी है कि वे श्रुति नहीं, मुनि-मार्ग के अनुयायी थे। किसी भी मत, विचार या सिद्धान्त को उन्होंने बिना अपने विवेक की कसौटी पर कसे स्वीकार नहीं किया। यदि उनकी बुद्धि को वह ठीक नहीं जँचा, तो उसके प्रत्याख्यान में तनिक भी मोह नहीं दिखाया। इसी विश्वास के कारण वे क्रोचे, रवीन्द्र, कुन्तक, ब्लेक या स्पिन्गार्न की तीखी समीक्षा कर सके थे।आलोचना के क्षेत्र में उन्होंने सदैव लोक-संग्रह की भूमिका पर काव्य को परखना चाहा तथा लोकसंग्रह सम्बन्धी धारणा में उनकी मध्यवर्गीय तथा कुछ

मध्ययुगीन नैतिकता एवं स्थूल आदर्शवाद का भी मिश्रण था। इस कारण उनकी आलोचना यत्र-तत्र स्खलित भी हुई है। शुक्ल जी ने अपने समीक्षादर्श में ‘एक की अनुभूति को दूसरे तक पहुँचाया’ काव्य का लक्ष्य माना है तथा इस प्रेषण के द्वारा मनुष्य की सजीवता के प्रमाण मनोविकारों को परिष्कृत करके उनके उपयुक्त आलम्बन लाने में उसकी सार्थकता और सिद्धि देखी है। कवि की अनुभूति को सम्पूर्ण विश्व में व्याप्त समझने के कारण उन्होंने कविकर्म के लिए यह महत्वपूर्ण माना कि “वह प्रत्येक मानव स्थिति में अपने को ढालकर उसके अनुरूप भाव का अनुभव करे”। इस कसौटी की ही अगली परिणति है कि ऐसी भावदशाओं के लिए अधिक अवकाश होने के कारण उन्होंने महाकाव्य को खण्ड-काव्य या मुक्तक-काव्य की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण स्वीकार किया। कुछ इसी कारण ‘रोमाण्टिक’, ‘रहस्यात्मक’ या ‘लिरिकल’ संवेदना वाले काव्य को वे उतनी सहानुभूति नहीं दे सके हैं।

साधारणीकरण:-शुक्ल जी असाधारण वस्तु योजना अथवा ज्ञानातीत दशाओं के चित्रण के पक्षपाती भी इसीलिए नहीं थे कि उनसे प्रेषणीयता में बाधा पहुँचती है। इस सिद्धान्त के स्वीकरण के फलस्वरूप साधारणीकरण के सम्बन्ध में कुछ नयी व्याख्या देते हुए उन्होंने ‘आलम्बनत्व धर्म का साधारणीकरण’ माना। यह उनके स्वतंत्र काव्य-चिन्तन तथा अपने अध्ययन (विशेष रूप से तुलसी के अध्ययन) के द्वारा प्राप्त निष्कर्ष का परिचायक भी है। अपनी क्लासिकल रस दृष्टि के कारण ही उन्होंने काव्य में कल्पना को अधिक महत्व नहीं दिया। अनुभूति प्रसूत भावुकता उन्हें स्वीकार्य थी, कल्पना प्रसूत नहीं। इस धारणा के कारण ही वे छायावाद जैसे काव्यान्दोलनों को उचित मूल्य नहीं दे

सके। इसी कारण शुद्ध चमत्कार एवं अलंकार वैचित्र्य को भी उन्होंने निम्न कोटि प्रदान की। अलंकार को उन्होंने वर्णन प्रणाली मात्र माना। उनके अनुसार अलंकार का काम “वस्तु निर्देश” नहीं है। इसी प्रसंग में यह भी उल्लेखनीय है कि उन्होंने लाक्षणिकता, औपचारिकता आदि को अलंकार से भिन्न शैलीतत्व के अंतर्गत माना है। काव्य शैली के क्षेत्र में उनकी सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थापना ‘बिम्ब ग्रहण’ की श्रेष्ठ मानने सम्बन्धी है, वैसे ही जैसे काव्य वस्तु के क्षेत्र में प्रकृति चित्रण सम्बन्धी विशेष आग्रह उनकी अपनी देन है।